मनु प्रताप सिंह चींचडौली

इंक पब्लिकेशन

ISBN : 978-93-90517-77-0

Copyright : Manu Pratap Singh Chinchroli

Publishing Right : Ink Publication

First edition : January 2023

Price : 200 /-

Publisher : Ink Publication

Print & Bound in India

Published by : Ink Publication

Office : 333/1/1K, Naya Pura, Kareli, Prayagraj - 211Œ16

email : publicationink@gmail.com

Mobile : 9455400973, 8318034587

Title : Ranhunkar (Poetry)

Poet : Manu Pratap Singh Chinchroli

Cover & Text Design : ink Art & Creative Team

समर्पण

मेरे जीवन के निर्माता
माता–पिता
और
प्रेरक ऐतिहासिक पुरोधाओं
को
समर्पित

राजपूताना इतिहास और कवि

काव्य–ग्रन्थों में समाज को नवदिशा प्रदान करने की प्रेरणा अवश्य सम्मिलित होनी चाहिए। मध्यकालीन साहित्य विशेषकर चारण साहित्य वीर रस की रचनाओं से परिपूर्ण हैं, जो कवि जाति, धर्म, वर्गवाद इत्यादि बुराइयों से परे राष्ट्रीयता और मानवता को प्राथमिकता देता है, वह ही आदर्श और कालजयी बनते हैं। उनकी उपादेयता एवं प्रासंगिकता भूतकाल से जारी रहकर भविष्य तक बनी रहती है, क्योंकि उनकी सत्य रूपी कलम राजदरबारों में नहीं बिकी। कर्मयोगी श्रीकृष्ण ने गीता ज्ञान को संसार में भेंट कर बौद्धिक उत्थान को प्रबल किया। पांच हजार वर्षों पश्चात् भी गीता ग्रन्थ की प्रासंगिकता जीवंत है। गीता और श्री रामचरितमानस आदर्श धर्मकाव्य हैं, जिनकी उपस्थिति भारतवर्ष के प्रत्येक घरों में है।

सही अर्थ में काव्यक्षेत्र विस्तृत हैं। कवि की कल्पनाएं स्वाधीन और मुक्त होती हैं। उसने कुरुक्षेत्र के समरांगण से लेकर लोकतांत्रिक आपातकाल तक आवाज़ बुलंद की है तथा सत्ता एवं अधर्म को समूल नष्ट कराने में संप्रेरक का कार्य भी किया है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में क्रांतिवीरों ने कारागृह की दीवारों को पन्ने बनाकर उसमें महाकाव्य उकेरे हैं। राष्ट्रीय गान–गीत कवियों–साहित्यकारों द्वारा प्रदत्त राष्ट्रीय उपहार हैं, जिसके सम्मान में प्रत्येक नागरिक उसकी धुन और राग में खड़े हो जाते हैं। देश की अव्यवस्था से क्रोधित होकर राष्ट्रवादी कवि अपनी रचनाओं के माध्यम से जनमानस को उद्वेलित करती हैं। देश के प्रत्येक कवि अपने भावानुरूप संचित प्रकृति से प्रभावित होकर रौद्र, वीर, करुण, प्रेम, श्रृंगार आदि रसों पर आधारित काव्य रचते हैं। उनकी कालजयी रचनाएं तेज धड़कते हृदय का स्पंदन हैं, इसे अनुभव वही पाठक कर सकता है, जिसमें वीरत्व और रौद्रत्व जीवंत हो। इन्हीं को पढ़कर पाठक कवि के भावों से द्रवित होते हैं। काव्य रचना जगत में चेतना को प्रसारित करने का कार्य करते हैं। उनकी चेतना शक्ति प्रबलतम और कालजयी होती है। कविताएँ सम्पूर्ण मानव जाति को दायित्व

बोध करवाती हैं, इसके अतिरिक्त पापों को परिमार्जन करने में भी सहायक होती हैं।

बदलती परिस्थितियों से आहत होकर समय–समय पर कवियों ने अपनी मार्मिक, ओज रचनाओं द्वारा जगत में गंभीर शंखनाद किया हैं। 'रणहुँकार' काव्य रचना का उद्देश्य ऐतिहासिक घटनाओं का पुनर्जागरण के साथ अपने महान पूर्वजों का तर्पण करना मात्र है। राजस्थान का साहित्य सूर्यमल्ल मिश्रण की वीरता की उपासना और मीराबाई की पदावली युक्त भक्ति रस से योजित है। अंतिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान और महान स्वतंत्रता सेनानी महाराणा प्रताप को सही मार्ग दिखलाने में चन्द्रवरदाई और पृथ्वीराज राठौड़ का महत्वपूर्ण योगदान था। जब महाराणा फतेह सिंह लार्ड कर्जन के आमंत्रण पर गोरों के दरबारों में सम्मिलित होने के लिए निकले, तब केसरी सिंह बारहठ ने 'चेतावनी रा चुंगट्यां' लिखकर महाराणा फतेह सिंह को मेवाड़ी गौरव को पुनः स्मरण करवाया। कवि का क्या कर्तव्य होता हैं? वह चन्द्रवरदाई, पृथ्वीराज राठौड़, केसरी सिंह बारहठ ने भिन्न–भिन्न शासकों को भली भाँति समझाया है। कवि मात्र युगपुरुषों के पथ प्रदर्शक ही नहीं थे, अपितु उन्होंने युगपुरुषों को इतिहास में सदा के लिए अमर भी किया। जब स्वतंत्रता के महान पुजारी महाराणा प्रताप का देहावसान हुआ, तब राष्ट्रकवि दुरसा आढ़ा ने यह शोक संदेश काव्यरुप में मुग़ल सम्राट अकबर को लाहौर में दरबार में सुनाया, तो शत्रु तुर्कों के भी आँखों से अश्रु आ गये। दुरसा आढ़ा का ग्रन्थ विरुद छतहरी महाराणा प्रताप के शौर्य, स्वाभिमान और स्वतंत्रता प्रेम की अमिट पुस्तक हैं। कवि जोधराज कृत हम्मीर रासौ में रणथंभौर के चौहानों के बाँकेपन का सजीव चित्रण हैं। राजस्थानी साहित्य के हैरोस कवि पृथ्वीराज राठौड़ ने गागरौन में 'वेळी किसन रुक्मणी री' रचकर अभूतपूर्व कीर्ति प्राप्त की। इस रचना को राष्ट्रकवि दुरसा आढ़ा ने पांचवा वेद और 22वाँ पुराण कहा है। जब हिन्दूपति महाराणा सांगा खानवा के समर में पराजित हो गये थे, तब वे पराजय के दुःख में इतने डूब गये कि, वे मानसिक अवसाद में चले गये। तब चारण कवि टोडरमल चांचलय ने सांगा को ओजस्वी कविता सुनाकर उनको

हार के दुःख से निकालकर पुनः युद्ध प्रस्थान के लिए आह्वान किया। महाराणा सांगा उस चारण कवि से इतने प्रसन्न हुए थे कि, उन्हें बफान की जागीर भेंट स्वरूप दी।

राजस्थान साहित्य और इतिहासकार में बूंदी के राव राम सिंह हाड़ा के दरबारी राजकवि सूर्यमल्ल मिश्रण का नाम प्रथम पंक्ति में आता है। वास्तव में सूर्यमल्ल मिश्रण अपने युग के वीर रसावतार थे। वे राष्ट्रीय नवजागरण के पुरोधा एवं प्रतीक थे। अंग्रेजी सत्ता का रियासतों पर अधिकार–प्रभाव होने पर राजकवि ने विभिन्न शासकों को स्वाभिमान और गौरव को भूल जाने पर रचनाओं द्वारा धिक्कारा था। उनकी अमर रचना 'वीर सतसई' की उद्घोषणा राजस्थान के स्वाधीनता आंदोलन में गूँजी। वीर सतसई जैसा अपूर्व ग्रन्थ आज भी राजपूतों में सोई हुई सुप्त वीरता और साहस को जाग्रत करने का बल रखती है। यही प्रभाव कविराज बांकीदास आसिया के साहित्यों में भी दृष्टिगत होती है। कवि बांकीदास जोधपुर के महाराजा मान सिंह के दरबारी कवि थे।

आधुनिक साहित्यों में कन्हैयालाल सेठिया की काव्य रचनाएं पीथळ–पाथल, धरती धोरां री आदि राजस्थान की जनवाणी में व्याप्त है। भिन्न–भिन्न कवि और साहित्यकारों ने राजस्थान की अनुपम और अनूठी वीरता की उपासना व आराधना की है।

29 दिसम्बर, 2021, जयपुर

– मनु प्रताप सिंह

1

धूल भरी पुस्तकें खोलो, सुप्त पृष्ठों को जगाओ।
योद्धाओं की जय बोलो, वीरता के शौर्यगीत गाओ।
उठो जाग्रत उपद्रवियों डोलो, व्याप्त तम को भगाओ।
वीरों साहस को तोलो, अपना ध्येय लगाओ।।

वीरता के शब्दयुद्ध से, रचता काव्य कलमकार।
अतीत के जागरण से, चतुर्दिक गूँजती रणहुँकार।।

2

सूरमाओं ने नहीं स्वीकारी थी, मृत्यु वाली खाट।
मात्र सजे कृपाण–भाल ही, उनके ठाट–बाट।
प्रत्युत्तर देते रणांगण में, करते मार काट।
अंतिम ध्येय रणखेत से, खुलते मृत्यु कपाट।

समर में समरवीर की, गूँजे तलवारों की टंकार।
घायल सिंह की दहाड़ ही हैं, निर्मित रणहुँकार।।

3

स्वर्णप्रभा को हथियाने, जुटी थी बड़ी तादाद।
काफ़िर विरुद्ध कट्टरता से, घोषित हुआ जिहाद।
मलेच्छों के तीव्र हमलों से, राष्ट्र हुआ बर्बाद।
हमें मारकर वो करते थे, स्वयं को आबाद।

सिर–कलम धड़ अलग, सर्वत्र मचा हाहाकार।
शत्रु के छल–प्रपंचो से, मन्दित हुई रणहुँकार।

4

चित्त करने भीरु को, देते वीर सदैव पछाड़।
घमासान संग्राम से आती, रक्त प्रवाह की बाढ़।
धुजती रणधरा को डराती, मतवाले मतंग की चिंघाड़।
कंपित कराने शत्रुओं को, नर–केसरी मारते दहाड़।

रण–उन्माद मस्त रणपति, जपेंगे युद्ध के महोच्चार।
चेतक–राम प्रसाद भी देते यहाँ, अरियों को रण हुँकार।।

5

वीर सदैव ठोकते, महादंगल की ताल।
होगी अब प्रज्ज्वलित, शक्ति की ज्वाल।
तीर वर्षा में वीर तुम, सम्मुख करो ढाल।
अभिमन्यु के भाँति तुम, भेद करो जंजाल।

वीर भोग्या वसुंधरा मात्र, यही भारत की पुकार।
मृत्यु–संकट के मद्यपान से, गूँजे मतवालों की हुँकार।।

6

वीर पकड़े तलवार हत्थे, छकाते करते दाँत खट्टे।
शत्रु के झूठे दर्प कटे, भीषण रण से पीछे हटे।
हाथों से भाले छूटे, प्रहारों से ढाल टूटे।
मूल्यवान साहस लूटे, अभागे हारे भाग छूटे।

भय, भिड़ंत, घमासान से, फूट पड़ा ज्वार।
रणातुर को भयातुर करती, संचार तरंगित रणहुँकार।

7

अनहोनी के भावी सन्देशों से, व्याकुल थी विरहणी।
करने विस्मित वाली वीरता को, उफ़ान रही निर्झरिणी।
मृत वीरों से प्रचण्ड युद्ध मे, पट गयी धरिणी।
भयावह युद्ध, वीभत्स देखो, रक्तधारा बनी तरंगिणी।

अग्निप्रवेश में दिखी सती, फिर सोलह सजे श्रृंगार
अस्तित्वहीन सती भी देती, वेश्याओं को रणहुँकार।।

8

कदमताल से शत्रु के, हृदय ठिठक रहे थे।
पराक्रम के जलवों से, शत्रु डर रहे थे।
झुंडों में साहस को, शत्रु भर रहे थे।
किन्तु वीरता गालों पर, तमाचे जड़ रहे थे।

देख रणछोड़ों को जननी, रही है धिक्कार।
साहस तोड़ की क्षमता वाली, गूँजे रणहुँकार।।

9

दुष्चरित्र के अपराधों को, भय हमेशा मारती।
शोणित से दीप जलाकर, वीर करो आरती।
अधिकार युद्ध में उद्दत खड़ा, कुरुक्षेत्र का सारथी।
गांडीव की खींची प्रत्यंचा से, गर्वित माँ भारती।

फन उठाये चेता रही है, अहिराज की फुफकार।
गूँजे महाभारत के संग्राम में, देवपुत्रों की रणहुँकार।।

10

विशुद्धि ज्ञान के लिए वामों ने, बुने थे जंजाल।
कैसी शिक्षा ले रहे हम, रे! पूज रहे कंकाल।
शिक्षान्तरण के रण ने, बनाया अंधेरा त्रिकाल।
सिंह–गर्जना को दबाकर, बहुसंख्यक बने श्रंगाळ।

बिकी कायरता वीरता में, बिके इतिहासकार।
किंतु गूँजती गुमनाम पन्नो में, शौर्ययुग की रणहुँकार।।

11

काल की छाया आयी, युगवीर हुए क्रुद्ध।
तनी भृकुटि जैसे आया, अवतार महा–रुद्र।
उसके भू–चालों से मचला, धरा महि–समुद्र।
तब भाग खड़े हुए, अरि–कायर–क्षुद्र।।

काल मृत्यु को निस्तेज कर, देते युगवीर रणहुँकार।।

12

धर्म–अधर्म में, छिड़ चुकी है जंग।
स्थली शुद्ध–विशुद्ध के, बदल चुकी है रंग।
हिंसा–अहिंसा से मानवता, हो चुकी है तंग।
होते यहाँ मृत्यु–जीवन के, सात फेरे संग।

द्विपक्षों के रणभूमि में, होते स्वप्न साकार।
सत्य शाश्वत रहेगा वह, सदैव गूँजेगी रणहुँकार।।

13

निर्जर क्षेत्र सेना से पटकर, बदल जा रहा।
रणदेवों को सैन्यसंघ का, परिदृश्य भा रहा।
शीश पर चढ़े सूर्यदेव अपना, सितम ढा रहा।
वर्चस्व बनाने युग परिवर्तक देखो, अरिदल आ रहा।

क्रोध ज्वाला को भड़काती ये, अरियों की ललकार।
दुदुंभी के उद्‌घोष से, युद्धवीर देते रणहुँकार।।

14

वीर काल था जब वह, नहीं थी कोई सीमा उम्र।
विराजित हो सिंहासन पर, करते दिग्विजयी समर।
समरांगण में आयी अंधड़ ने, तोड़ी बैरी की कमर।
रणक्षेत्र की बलिवेदी में युवा, करते गाथा अपनी अमर।।

श्रृंगार करते वीरत्व आभूषण से, जब निर्जर मरु कान्तार।
काननपति सम शार्दूल देते, दहाड़कर रणहुँकार।।

15

भीरु जैसे जमे, सूखे दरख्त ठूँठ खड़े।
सत्य वीरों पर, कायरों पर सदैव झूठ अड़े।
रण उद्घोष से, तीर बाण से छूट पड़े।
वीर रणांगण में, कहर बनके टूट पड़े।।

वीरता के मैलों में, कभी बिकती नहीं तलवार।
युद्धरत अभय शूरवीरों से, तीव्र उठती रणहुँकार।।

16

स्वाभिमान और रखना, माटी का सम्मान।
कर रही विशाल सेना, समर प्रस्थान।
हैं वीरगति वीरों की, रणचण्डी को दान।
करेगा स्वर्ग वीरों का, गायेगा शौर्यगान।।

बढ़े चलो वीरों, खुला है मुक्ति का द्वार।
तुम्हारी पीढ़ियां गुँजायेगी, स्मृति की रणहुँकार।।

17

चढ़ाई करते शत्रु दल देख, बुर्जों पर जा चढ़ी।
कमर कस ले वीर, समक्ष मृत्यु काल खड़ी।
समर्पण से बेहतर कहीं, शीश कटाना बात बड़ी।
इन वंश की भुजाओं ने कभी, थी भयानक लड़ाई लड़ी।।

पूर्वज ऋण से मुक्त हों, हो वीरों का उद्धार।
जीर्ण दुर्ग प्राचीरों से गूँजे, अलबेलों की रणहुँकार।।

18

विजयगति बढ़ी तल से, चढ़ना काफ़ी था दुष्कर।
बीच मग पर मिलते घातक, व्याघ्र हिंसक और विषधर।
बहादुरों के पद दलन से, काँपता–धूजता है भूधर।
झुके कातर से अधिक तो, वीरगति पाना है श्रेयस्कर।।

शिखर पर जयध्वजा लहराकर, किया योद्धाओं ने अधिकार।
फहरते केशरिया की आन देती, शत्रुओं को रणहुँकार।।

19

आ धमके शत्रु, देखो किले चढ़ रहे।
नुकीले पोलों से डर, पीछे गज हट रहे।
केशरिया बाने रणशूर, असंख्यों से भिड़ रहे।
सपूतों के सर कटे, पर धड़ लड़ रहे।।

खेतों में फसल अमर तो, कटे भीरु खरपतवार।
स्फुटित करती वीरत्व को, रणवीरों की रणहुँकार।।

20

समरांगण में दो पक्ष लड़े, वैरभाव के संग जंग।
फूटती–घुमड़ती शूरता को, आया डसने अरि भुजंग।
फन कुचलकर वीरों ने पाया, अजेय पर्वत का श्रृंग।
जय–उच्चार के निनाद से, बजे राग विजय मृदंग।।

सम्मान की उज्ज्वलता ही, वीरों का जीवन आहार।
रणचंडी पर अर्पित मस्तक, देते यमकाल को रणहुँकार।।

21

दिलेरी से बैरी त्रास से, होते कंपित धरधरा।
रणबांकुरों के रजगुण से, संचित हैं ये गर्भधरा।
राम–कृष्ण युगधर्म से, धन्य हुई ये विश्वम्भरा।
समरशूरों की परंपरा सदैव, वीर भोग्या वसुंधरा।।

रमणते नहीं वीर उपवन में, करते सदैव समर विहार।
भीषण संग्राम से उठे, योद्धाओं की रणहुँकार।।

22

दुर्गंध मारकर पटी मेदिनी, हुआ था दुर्दांत महान रण।
रक्त तरंगिणी से रंगा है, प्रत्येक मृदा का कण–कण।
मात्र लड़ते धड़ से हुआ, यहाँ अनोखा रण–मरण।
शीश–मुण्ड को देख कालखंड, लिखना हुआ था युद्ध भीषण।।

देते मुंडों की माला पिरोकर, हुतात्मा रणदेवी को उपहार।
रणोही में पुनः जागरण से, गूँजती जुंझारों की रणहुँकार।।

23

घेर व्योम को काले अम्बुद, आया काल का साया।
रुद्रदेव के खुले त्रिनेत्र से, सम्पूर्ण जगत था थर्राया।
संचित मेघ रक्तनीर ने, गुर्राकर रण–मल्हार गाया।
तड़ित–झंझा की कोपभजन बनी, अरियों की दुर्बल काया।

वारिवाह बनते सूरमे करते, रणभूमि में लहू बौछार।
प्रलयंकारी मेघ गर्जना देती, रिपुओं को रणहुँकार।।

24

सजी तरिणी अनेकों उतरी, शौर्य के उफ़ान में।
जमाने पैठ अरि घुसे, महावीरों के जहान में।
जगा सुप्त रौद्र रूप, वीरों के चित्त ध्यान में।
डूबे जलयान बुजदिलों के, ऊंचे वीचि के तूफ़ान में।।

कड़ककर दामिनी करती, स्वागत शूरों के जयकार।
गिरती चपला के प्रस्फोटन से, गूँजती रणहुँकार।।

25

खड्ग ढाल का है वीरों से, संबंध बड़ा अटूट।
निरन्तर प्रहारों से अरि की, असि जाती है छूट।
युद्धदेवों की शिराओं से फूटा, वीरता का संपुट।
ध्वजा लहराकर वीरों ने, किया रिपु को पदच्युत।।

रहो तत्पर आहुति देने, उठाओ तलवार–निकालो कटार।
शत्रुओं का वक्ष भेदकर वीरों, गुंजाओ अपनी रणहुँकार।।

26

उठती वीरों की हूँके, गूँजती भुजंगों की फूँके।
रिपु दल गमन रुके, भय से जिह्वा सूखे।
थे वीर प्राण के भूखे, युद्ध में अरि ठुके।
रण में प्राण सूखे, रण में कायर झुके।।

शस्त्रास्त्रों से होता यहाँ, वीरों का संस्कार।
युद्ध आमंत्रण देती रिपुओं को, युद्धवीरों की रणहुँकार

27

आयी काल की छाया, युगवीर हुए क्रुद्ध।
तनी भृकुटि जैसे आया, अवतार महा–रुद्र।
उसके भू–चालों से मचला, धरा महि–समुद्र।
तब भाग खड़े हुए, अरि कायर क्षुद्र।।

रक्षक धरा के वीर हैं, हैं जग के तारणहार।
काल–मृत्यु को निस्तेज कर, देते युगवीर रणहुँकार।।

28

जग हुआ मैला विष से, पाशविक खल से।
मिटी जलकर सत्ता, वीरों की दावानल से।
उड़ी धूल की गुबार, सैन्य बाजि–दल से।
पाया विजय–शिखर, पुरुषार्थ भुज–बल से।
जपे वीरों ने रणमंत्र, भोले के ओंकार।
दुष्ट–दलन से गूँजती, वीरवरों की रणहुँकार।।

29

ऋषि–यतियों के, आदेश हो निरस्त।
आमंत्रण के युद्ध में, हो जाओ वीरों व्यस्त।
प्रथम–पंक्ति में सजे, शूरवीर खड़गहस्त।
अभागे रिपुओं का, हुआ साहस पस्त।।

वीरत्व की हूँकों से होता, साहस का संचार।
टकराते बरछे–भालों से, असि से उठे रणहुँकार।।

30

कृष्णभक्ति के लिए, किया था मीरा ने विषपान।
युद्धोन्माद राजा मान सिंह करता, अरियों का लहूपान।
काट डाला सलावत को, जिसने पीकर घूँट अपमान।
राष्ट्र के गर्वीले अतीत से, जिज्ञासुक करेंगे अमियपान।।

कवि मंचों से बखान करेगा, रचेगा छंद अपरम्पार।
महाकाव्य को जाज्वल्य करेगी, गूँजकर रणहुँकार।।

31

घुसपैठियों का जब क्षत्रियों ने, रोका था अट्टहास।
तब रजपूती ने उड़ाया, झूठी वीरता का उपहास।
क्षात्रशक्ति का जग को, हुआ सत्य आभास।
बिना शीश धड़ लड़े, बनाया राजपूतों ने इतिहास।

शीश–धड़ स्थलों पर मंदिर, पूजे जाते जुंझार।
वीरों की देवलियों से गूँजे, रणवीरों की रणहुँकार।।

32

गीता ज्ञान ने छूटे गांडीव को, सशक्त करों में धराया।
पृथ्वीराज को अमर बनाने, चन्द्रबरदाई था आया।
पीथल के वीर पत्रों से, घायल प्रताप था गुर्राया।
केशरी की चेतावनी चूँगटों ने, सोये मेवाड़ को जगाया।।

महाकाव्य के रणक्षेत्र में सुनो, तलवारों की टंकार।
इतिहास निर्माता कवियों से, गूँजे प्रबल रणहुँकार।।

33

विश्वनाथ चाह से करती तप, हिमवान नन्दिनी।
भार्या रूप गौरी, तुम सदा शिव की संगिनी।
विकराल रूप लेकर, गरजती महिषासुर मर्दिनी।
उदार करुणा की देवी बहती, जैसे पोषित शैवालिनी।।

कलुषित दैत्यों के काट मुण्ड, करती रणचण्डी महासंहार।
कभी सती तो कभी भवानी बनकर, देती कांता रणहुँकार।।

34

भस्म–व्याल–चन्द्र से, सजे पशुपति विभूषित।
खुले विध्वंस दृग से, मिटे पाप–कलुषित।
काम मृदु प्रहारों से, न डिगे भोले किंचित।
शिव–नन्दी के पग–धूलि से, हैं कैलाश धरा सिंचित।।

तहलका मचाये संहारों में, शंकर के रुद्रावतार।
शिव–तांडव से उठे चहुँ, प्रलयंकारी रणहुँकार।।

35

जग उठे वह नृत्य फिर, तांडव वाले शंकर।

भरो माँ काली का, रक्त वाला खप्पर।

मानवता के जल वाला, भरा रहे पुष्कर।

चढ़े फिर रणचण्डी, नीलकंठ के ऊपर।।

कपीश की पूँछ से पुनः, जले लंका धुंआधार।

समुद्र मंथन में गूँजी थी, देवगणों की रणहुँकार।।

36

जमदग्नि के हुए यहाँ, देवों के अवतार।

शोषकों के अत्याचार से, जगत में फैला हाहाकार।

परशुराम के क्रोध से, संपूर्ण कांपा संसार।

अमर्ष पावक से हुआ, तब पापियों का संहार।।

महान विप्र को किया था, भीष्म–कर्ण ने अंगीकार।

राम का परशु देता, अधर्मी क्षत्रियों को रणहुँकार।।

37

तुम क्षत्रिय थे धुरन्धर, धरा के उच्च्व महीप।

तुम थे ब्रह्मर्षि, समस्त मुनियों के प्रदीप।

विश्वामित्र का स्वर्ग में, रहता सदा आसन समीप।

राजर्षि के तपोबल से हुआ, उद्धार भारतीय द्वीप।

तोड़े उन्होंने प्रतिशोध से, अध्यात्म–धर्म के अनन्त आकार।

राजर्षि से ब्रह्मर्षि बनकर, विश्वामित्र देते रणहुँकार।।

38

मात्र बाल्य खेलों में, उठा देती जानकी शिवधनु।

मानवी वैदेही कुलजड़ित रत्न, देह तेरा मनोहर तनु।

महान भूमिजा हुई आदर्श, कहलायी योग्य संतान मनु।

स्वयंवर में टूटे शरासन से, होती वरणइच्छा रामप्रिया बनूँ।

स्त्रैण गुणों का रखती हैं, माँ जानकी सर्वाधिकार।

जानकी नन्दन लव–कुश गुँजाये, सूर्यवंश की रणहुँकार।।

39

दनुजों ने डाल विघ्न, किया विश्वामित्र का यज्ञ अशुद्व।
चढ़ा लाए वो इक्ष्वाकुओं को, दुष्ट दैत्यों के विरूद्व।
तमचरों के उत्पात देख, राम लक्ष्मण हुए कुद्व।
अस्त्र–शस्त्र वार–प्रहार, शुरू हुआ ताड़का युद्व।

दहकते सूर्यवंश के अनल से, हुआ ताड़का संहार।
रिपुवध से चहुँदिश गूँजती, रामचन्द्र की रणहुँकार॥

40

सीता के जनक थे, मिथिला के विदेहराज।
स्वयंवर के आयोजन में, आये सुरासुर समाज।
धनुष के भार से, गिर पड़े महाराजाधिराज।
किन्तु राघव ने बचाई, अवध रघुवंशियों की लाज।।

टूटे धनुष से उठी, प्रबल धनुष–टंकार।
परशुराम के अहम को देते, लक्ष्मण अपनी रणहुँकार।।

41

राजत्याग कहीं वनवास जाना, मिला प्रस्तर आदेश।
कर्त्तव्य आज्ञा–पालक बोले, क्या ओर भी इप्साएं शेष।
उतार किरीट धारित हुए, मुनि केश और मुनि भेष।
पुत्रपीड़ा धर्म त्रस्त से दशरथ, देखते एकटक निर्निमेष।

बोले रामप्रिय सीता–लक्ष्मण, है वनों का दुःख अंगीकार।
मारकर वनमार्ग के दैत्यों को, देगा लक्ष्मण रणहुँकार।।

42

पुत्रत्याग से हुए दिवगंत राजन, करती अयोध्या प्रलाप।
दुःख विपदा के समय में, हुआ राम–भरत मिलाप।
कैकेयी भी हारी कुल–कलंकित, करती समक्ष विलाप।
चलो ज्येष्ठ राज्य करो, कहीं मुझे न मिले दुश्राप।।

धर्म–कर्त्तव्य की बाध्यता में, राघव को राज्य नहीं स्वीकार।
महागुणों से संपन्न रघुपति, देते सभ्यता की रणहुँकार।।

43

सुनता राम–राज्य कानन में, पंचवटी के कलरव।
शूर्पणखा पापिन को, देते चेतावनी नरपुंगव।
राम के शर–संधान से, तड़पता मारीच शव।
सीता–हरण से बहते, पावन के अश्रु द्रव।।

राम के कर्णों को दर्द देती, सीता की चीत्कार।
बहते राम के अश्रु देते, लंकापति को रणहुँकार।।

44

रोकता पथ नर–मर्कटों के, सम्मुख पयोधि तीर।
समुद्र गर्जना भयकारी से, हुए कपि–दल अधीर।
वृहद सागर की दुर्गमता देख, रघुनाथ हुए गंभीर।
विभीषक विशिख को तानकर, सुखाने सिंधु को रघुवीर।।

देवों की करुण पुकार से, बचा अविरल बहता पारावार।
अहंकार को तोड़कर रामचन्द्र देते, वरुणदेव को रणहुँकार।।

45

हुए देखकर भयभीत शत्रु, श्रीराम का तेज प्रचंड।
बाहुबल हनुमान से होती, अखण्ड लंका खण्ड–खण्ड।
अंगद–मारुति मर्कट तोड़ते, दैत्यराज का घमंड।
मिला लंकेश को था, अहं–अधर्म का कड़ा दण्ड।।

बने वायुपुत्र आंजनेय, लंकाविजय के सूत्रधार।
लँकायुद्ध में गूँजती थी, वीर वानरों की रणहुँकार।।

46

महाभिमान को धूमिल करने, ताने शरासन को राम प्रदर्शक।
आरम्भ हुआ देव–अमित्रों में, महासंग्राम लोहमर्षक।
बने नवयुग सूत्रण के विबुध, रणक्रीड़ा के साक्षी दर्शक।
छिप गया अम्बर कोदण्डों से, निकले तीर दंशक।।

उद्धत–प्यासी करवालों से, गूँजती थी खनकार।
लंका की नगरी में गूँजे, रघुवंश की रणहुँकार।।

47

बरबस महाशक्ति से जूझकर, निकला दारुण स्वर।
किया विजयदेवी का, श्रीराम ने तप–अध्वर।
रण मे भिड़ा धर्म–अधर्म, लंकेश और रघुवर।
सूर्यवंश के तत्व ने, तोड़ा लंका का भँवर।।

इक्ष्वाकुओं की धार से, कटे असुर खूंखार।
असुर–दलन से उठती थी, रणबांकुरों की रणहुँकार।।

48

लक्ष्मण थे सुमित्रानंदन, और उनके दशरथ पितृ।
उग्र बड़े वे क्रोधालु, शूपर्णखा दैत्य उनके अमित्र।
यज्ञ खण्डित कर टूटे वे, मेघनाद पर महाविचित्र।
लंकायुद्ध के प्रांगण में, चमका दिनकर अयोध्या सौमित्र।।

वक्षभेद शर से फैला, लक्ष्मण का अंत अंधकार।
किन्तु संजीवनी से जगकर देते, लखनवीर रणहुँकार।।

49

पुराकाल में था शासक, लंकेश रावण अशुद्ध।
किन्तु था वो शास्त्री, जगत का ज्ञानी अद्‌भुत।
उसके पापों से छिड़ा, युगपरिवर्तक महायुद्ध।
कोदण्ड को ताने श्रीराम, अहं–काम के विरुद्ध।।

मरा शरों से अमर तमचर, मिटा था फैला अंधकार।
अयोध्या की दीपावली देती, तमिस्रा को रणहुँकार।।

50

दानवों के मध्य था, जीवन जीना दूभर।
निकलकर कारागृह से, गये कृष्ण उभर।
अतिवृष्टि में त्राता बनकर, धरा धन्य गिरिधर।
विशाल व्याल पर डोले थे, बालवीर तुम निडर।।

सर्वगुणों का रखते थे, श्रीकृष्ण अधिकार।
मथुरा की रसमय भक्ति, देती कृष्ण की रणहुँकार।।

51

युवा कन्हैया प्रेमी की, थी प्रेमिका राधा अनन्य।
उन्हीं की लीलाओं से हुआ, जगत–धरा धन्य।
हुआ संहार शिशुपाल का, किया था पाप जघन्य।
कुरुक्षेत्र के महायुद्ध में, गूँजा शंख पांचजन्य।।

अधर्म के मध्य बने, कृष्ण धर्म के कर्णधार।
कुरुक्षेत्र का समर रचाकर, देते वासुदेव रणहुँकार।।

52

था द्वापर में, मथुरा में, तम प्रसारक कंस।
जिसके अधर्मी विष से, फैल रहा था दंश।
तब टूटकर बिखर रहा था, पुण्य–धर्म का अंश।
तब हुआ प्रकाशित कृष्ण से, कुलदीपक चन्द्रवंश।।

हुए कंसवध से त्रिलोक बोले, नहीं सहेंगे अत्याचार।
द्वियुग के संगम में बोलती, श्रीकृष्ण की रणहुँकार।।

53

बने शांतिदूत दरबार में विराट, देख दुर्योधन मूढ़।
अक्रिय विश्व को समझाया जिसने, कर्म रहस्य गूढ़।
जिसके नूतन ज्ञान ने हराया, प्रचलित जीवन रूढ़।
कृष्ण हुए महासमर में उदित, ब्रह्मा–विष्णु–चंद्रचूड़।।

कर्म रोम–रोम उठा नाच, सुन गीता ज्ञान की झंकार।
अकर्मण्यों को भयभीत कराती, कर्मदेव की रणहुँकार।।

54

बनी थी दासी राजवधू, फिकी पड़ी थी दया–उदार।
किन्तु अनन्त हुआ छोर वसन, किया कृष्ण ने धर्मसंचार।
वज्रपाणि से वक्ष चीरा, बह चली रक्त की धार।
कर स्नान शोणित से, हुआ पांचाली का उद्धार।।

रंगे शोणित से कुंतल जैसे, प्रगटी कालिका अवतार।
दुष्कर्मियों के प्राण हरकर, देती नारी रणहुँकार।।

55

पाँच पांडवों में बंटी थी, द्रुपद तनया नारी।
भरे दरबार में दानवों से, अबला हुई बेचारी।
कौरव–वध के प्रण पर, अचल थी व्रतधारी।
जिसकी अटल प्रतिज्ञा ने, कुरु वंश को संहारी।।

द्रुपद तनया बनी थी, महाभारत की सृजन–हार।
पांचाली की वेदना से गूँजे, प्रबल रणहुँकार।।

56

बाणों से रोका भीष्म ने, माँ गंगा का प्रवाह।
कौरवों की ढाल बनकर, दिखाई कुरुवंश को राह।
गांडीव से निर्मित बनी, उनकी शरसैय्या आरामगाह।
विशिख के पर्यंक पर उनके, बीते दिवा–माह।।

अर्जुन की तीरों से हुआ, भीष्म का मृत–संस्कार।
शरों से बिंधे भीष्म की, भावों से गूँजे रणहुँकार।।

57

अपने अनुजों से भिड़कर किया, दुर्योधन का उसने त्राण।
अनन्य मित्र ने सम्मुख धरा, निष्ठाभाव का स्वप्राण।
दिया कवच कुण्डल, उर पर धरकर, कठोर पाषाण।
अंत वाले शापित शरों से, किया कर्ण ने स्वर्गप्रयाण।।

कर्ण ने छोड़े कुरुक्षेत्र में, बाणों की वेग प्रचंड धार।
प्राण छोड़कर कर्ण ने दिया,अन्यायी समाज को रणहुँकार।।

58

अभिमानी क्षत्राणी से अच्छी, ये दासी मेरी प्रिय संजना।
कटिबद्ध हुआ राधेय आह्वान करता, कुरुक्षेत्र का मर्दना।
नहीं चाहिए भुजंग उपकार, होंगी इससे मेरी भावी भर्त्सना।
अर्जित मेरे भुजबल से ही, करूँगा युद्ध की गर्जना।।

साथ अधर्म से धर्म ने, किया कर्ण का तिरस्कार।
राधेय देता कौन्तेय को, विजयदान की रणहुँकार।।

59

अपमान वंचित से उठकर, पाया उसने विजय शिखर।
रंगभूमि की प्रतिद्वंद्वीता में, नहीं छोड़ी उसने कोई कसर।
राधेय नहीं कौन्तेय वह, छोड़ता तीखे अमोघ शर।
अंकित नाम सूर्यपुत्र का, है इतिहास में स्वर्णाक्षर।।

प्राणसंकट में न डिगा पर, छोड़ गया मित्र सत्यसार।
रश्मिरथी काव्य से उठे, सूर्यपुत्र की रणहुँकार।।

60

कुरुक्षेत्र में भिड़ी अक्षोहिणी, हुआ रण वाला धर्म।
पांचाली के चीर हरण से, धरित्री हुई लज्जित शर्म।
इसी का प्रकोप देख भू पर, वायस खाते अस्थि–चर्म।
धर्म स्थापना हेतु जग ने, जाना कृष्ण का करुण मर्म।।

उद्धार धरा ने किया प्रणाम, शत शत कोटि बारम्बार।
महारथियों को भी हराती, धर्मवीर की रणहुँकार।।

61

धर्मयुद्ध से विचलित धनंजय, बहा रहा अक्षि–नीर।
धर्म की हुंकारों ने कहा, संभल जा कौन्तेय वीर।
कर्मयोद्धा के आह्वान से, भरा पार्थ ने तूणीर।
इंद्रपुत्र ने छोड़े कोदण्ड से, अचूक–अमोघ तीर।।

गीता के सिंहनाद से, जगा सहसा पौरुष धार।
गांडीव उठाकर देता अर्जुन, कौरवों को रणहुँकार।।

62

गांडीव धनुष छोड़ चुका, हारे मन धनंजय।
कृष्ण के आह्वान से पार्थ, करता शक्ति संचय।
अर्जुन को धर्म बताने, कराया गीता का परिचय।
धनुषधारी शूर लड़ा वो, कहलाया मृत्युंजय।।

गीता की चेतना से उठा, अर्जुन वीर सुकुमार।
हारे अर्जुन को देती गीता, कर्मयोग की रणहुँकार।।

63

रणांगण में उतरा अभिमन्यु, था वासुदेव का भृत्य।
भेद चक्रव्यूह को वीर, नन्दन करता समर नृत्य।
अमोघ अस्त्र पावस से, किया कौरवों ने कुकृत्य।
झुण्ड श्रृंगालों से अकेला वो, सम्मुख हारा वीर–सत्य।।

कुरुक्षेत्र में अरि–मर्दन करता, अर्जुन का राजकुमार।
उठा रथ के पहियों से, अभिमन्यु देता रणहुँकार।।

64

प्राचीन भारतवर्ष में थे, जैन अहिंसक कठोर।
वैराग्य अपनाकर तोड़ा उन्होंने, जगत मोह का अनुबंध डोर
क्षत्रिय तपस्वी करते थे, साधना तपस्या अति घनघोर।
ऋषभदेव से महावीर तक, धर्मयुग का चला दौर।।

जैन धर्म से हुआ व्यापक, अहिंसा का प्रसार।
तप–साधना से उठे, धर्मवीरों की रणहुँकार।।

65

भ्रमण में देखा कुमार ने, निर्धन रोगी क्षत–विक्षत।
जगा दुःख रणक्षेत्र में, पड़े वहाँ सैनिक हताहत।
त्याग सांसारिकता को हुए, धर्मचिन्तक एक सम्मत।
हुआ उन्मुख राज बना, सिद्धार्थ से बुद्ध विरत।

आडम्बरों का खंडन कर, किया बुद्ध ने धर्मसुधार।
व्यापक एशिया में गूंजती, बौद्ध धर्म की रणहुँकार।।

66

सिकन्दर यूनानी करने आये, पंचनद को जब्त।
तब उत्तर का रखवाला था, पुरु देशभक्त।
झेलम विकटता से विजेता का, हुआ रक्त तप्त।
जग–जय का स्वप्न टूटा, झेलम बना अभिशप्त।।

जलमग्न हुआ रक्तमग्न, था महासमर प्रलयंकार।
बनाने इतिहास की ओर, इंगित करती रणहुँकार।।

67

किया अखण्डता के लिए, चन्द्रगुप्त ने प्रहार।
दुराचारी नन्दों को उखाड़कर, बने भारत के कर्णधार।
सेल्युकस को हरा कम करी, यवनों की असि–धार।
हेलेना को ब्याह कर उसने, दिया राज्य उपहार।।

चन्द्रगुप्त के बाद बने, मगध सम्राट बिंदुसार।
महा–साम्राज्य को संभालकर देते, मौर्य अपनी रणहुँकार।।

68

यवन द्वारे आ रहे थे, लूटने हमारा अवसान।
तब मिला सहयोग युगकारी के, कूटनीति का ध्यान।
जिन्होंने अखण्ड भारत की, प्रतिज्ञा ली थी ठान।
उनसे निर्मित सम्राट था, ऐतिहासिक चन्द्रगुप्त महान।

यवनारि मगध सम्राट की, लगती जय–जयकार।
आक्रांता को कंपकपाने वाली, गूँजे रण हुँकार।।

69

पुराकाल का नन्द साम्राज्य, का विशाल था आकार।
पर धनानन्द जैसे राजा से था, मगध को धिक्कार।
जन पर कर व अत्याचार, होते बारम्बार।
अपमानित चाणक्य की सौगंध से, होगा नन्दों का संहार।।

अंगीकृत से यवन डोले, डोले नन्दों का अंहकार।
यवन संहार से शूद्रों को, चेताती चन्द्रगुप्त की रणहुँकार।।

70

कलिंग विजय से बढ़ा, मौर्य साम्राज्य आकार।
सहम गया ह्रदय देख, कलिंग का नरसंहार।।
युद्ध त्याग कर किया, बौद्ध धर्म का अंगीकार।
तब विश्व पटल पर गूँजे थे, धम्म के उद्‌गार।।

धर्मविजय से हुआ, धन्य भारत का उद्धार।
युद्ध की छाती पर बैठकर, अहिंसा देती रणहुँकार।।

71

लिच्छवियों के संबंध से, हुआ गुप्तों का उत्थान।
साम्राज्य निर्माता समुद्रगुप्त, थे गुप्त वंश की पहचान।
समूल शकों को उखाड़कर बने, चन्द्रगुप्त राष्ट्र के त्राण।
हूणों के रक्त से सजी, स्कन्दगुप्त की कृपाण।।

कुमारगुप्त के प्रयासों से, हुआ शिक्षा का प्रसार।
गुप्तकाल था अतीत में, स्वर्णकाल की रणहुँकार।।

72

मालवा में राज्यवर्धन ने, पायी वीरगति।
किए तब हर्ष ने, हमले वेगगति।
प्रतिशोध से हुई, अरियों की दुर्गति।
बना था हर्षवर्धन, उत्तरी भारत का अधिपति।।

पुलकेशी से थमा हर्ष का, राज्य महा–विस्तार।
सातवीं सदी के नायक की, गूँजती रणहुँकार।।

74

बदलने हमारी गन्ध–हवा, भाग्य का फेरा।
यवनों के आने से, छा गया अंधेरा।
लूटती अस्मत से आहत हो, जब वीरों ने टेरा।
मिहिरभोज के उत्थान से, आ गया सवेरा।।

भोज की तलवार से, हुआ म्लेच्छों का संहार।
चार भुजाधारी रक्षक से, गूँजती रणहुँकार।।

74

आठवीं सदी में आये, म्लेच्छ क्रूर मक्कारी।
तब प्रकटे प्रतिहार, आदिवराह अवतारी।
थे प्रतिहार राष्ट्र–रक्षक, कहलाने के अधिकारी।
अडिग द्वारपाल थे वे, राष्ट्र के बलधारी।।

अरबों को बाहर खदेड़ते, कन्नौज के प्रतिहार।
सिंधु नदी तक गूँजती थी, नागभट्ट की रणहुँकार।।

75

बैंस क्षत्रिय थे हमारे, राष्ट्र के उद्धारक।
बढ़ आये थे आक्रांता, गजनी शस्त्र धारक।
भिड़े हिन्दू गाजी से, चले शस्त्र मारक।
नासीरुद्दीन ने तोड़ा था, बैंसों का विजय स्मारक।।

महमूद गाजी को डराती मात्र, सुल्तानपुर की हार।
बहराइच के संग्राम में गूँजे, सुहेलदेव की रणहुँकार।।

76

राय हरदेव आये थे, सुहेलदेव के साथ।
मारकाट मचाने राजपूत, थे लगाए घात।
हुआ था संग्राम में, भीषण रक्तपात।
सम्मुख खड़े मृत्युदेव से, हुए अश्रुपात।।

सुहेलदेव के हाथों से, मरा मसूद सालार।
बहराइच की विजयगाथा से गूँजे रणहुँकार।।

77

सुनाते दक्षिण की अजेयता को, अतीत के आख्यान।
हुए चोल सम्राट राजराज, वीर राजेंद्र महान।
चोलों का उतरा बेड़ा, समुद्र में जलयान।
लंका–कम्बोडिया तक पहुँची, नोसेना की पहचान।।

बादामी के चालुक्य वीर, मालवा के परमार।
पल्लव–चंदेल देते यहाँ, स्वर्णयुग की रणहुँकार।।

78

तड़पता था राष्ट्र हमारा, लिए बौद्धों की मुक्ति।
मांग थी वैदिक की, अमृत जीवन की सूक्ति।
सफल हुई कुमारिल की, पौराणिक मत की युक्ति।
आदिगुरु की यात्रा ने दी, धर्म प्रतिष्ठा की उक्ति।।

देते धर्मविहीन बौद्धों को, वैदिक अपनी ललकार।
सम्पूर्ण भारत यात्रा में गूँजती, शंकराचार्य की रणहुँकार।।

79

मात्र बारह वर्ष अल्पायु में, बने पृथ्वीराज सम्राट।
जीतकर उत्तरी भारत को, दिखाया साम्राज्य विराट।
जिनके दरबारों में सजते थे, विज्ञ चारण–भाट।
किन्तु घृणित विपक्षियों ने, असहयोग द्रोह का खुला कपाट।

समरक्षेत्र में गूँजायी विजय की, करवालों की खनकार।
अजेयमेरु की महाशक्ति से, गूँजती रणहुँकार।।

80

दिग्विजयी अभियान के मानचित्र पर, दौड़े अश्व–सरपट।
हराने वाले गजनी को, था पृथ्वीराज चौहान उदभट।
किन्तु वीरता को हराने आयी, गौरी के छल–कपट।
नव सल्तनत के प्रादुर्भाव से, बदला अतीत चित्रपट।।

हुआ सम्राट के अंत से, संस्कृति का संहार।
पराजित होकर भी चाहुवाँन देते, तुर्कों को रणहुँकार।।

81

फैला रहा था गजनी, अपना आधिपत्य मन्द मन्द।
तब कन्नौज मध्य भारत में, चमकता उन्नत चन्द्र।
वीरों ने राजभक्ति की, खाई चंदावर में सौगन्ध।
गौरी से भिड़ने वाला, गद्दार नहीं था जयचन्द्र।।

षड्यंत्रों से इतिहास ने किया, जयचन्द्र का अनुदार।
चन्दावर में गूँजती है, गहड़वालों की रणहुँकार।।

82

कभी झड़ते परिवर्तन से, कभी बदलती ऋतुपर्ण।
दिखाता शौर्य के श्रृंगार को, राजपुताना का दर्पण।
जानते नहीं झुकना कभी, न करते आत्मसमर्पण।
यहाँ केवल हम्मीर करता, हठीले मस्तक का अर्पण।।

त्रेता–द्वापर में हुए नहीं, यहाँ वो होते चमत्कार।
विशेषता इस धरा की हैं, रायथान की रणहुँकार।।

83

चौहानों की शौर्यस्थली दुर्ग, वह था बांका रणथंभौर।
खिलजियों से भिड़े राजपूत, गरजते करते रण घनघोर।
हम्मीर का अर्पित शीश बोलता, अन्यत्र मिलता कहाँ ठौर।
क्षेत्र जल जौहर में गूँजती, क्षत्राणियों का नाद–शोर।।

यहाँ मात्र उठती हैं, अस्थि कणों के गुबार।
कराल व्याघ्र देते यहाँ, हम्मीरदेव की रणहुँकार।।

84

भावी हमलों के अंदेशों से, जिसने नही सोचा अपना हित।
शरणार्थी को बचाने हेतु, निभाई शरणागत की रीत।
भिड़ा तुर्कों से भीषण, किया प्राण को समर्पित।
हठीला समक्ष शिव शंकर के, निज मस्तक करता अर्पित।।

रणथंभौर का हम्मीर बना, युद्धों का कलाकार।
हम्मीर के हठयोग से गूँजे, रणथम्भोर की रणहुँकार।।

85

खिल्जियों की घेराबंदी से, सिंह जालौर तेज दहाड़ता।
सोनिगरा के बाहुबल से, रिपु हार की धूल चाटता।
युद्ध मतवाला देव–वीरम, अरियों को समूल काटता।
किन्तु बीका के द्रोह से, दृढ़ स्वर्णगिरि अजेय हारता।

चित्त किया वीरता को, षड्यंत्रों से शिकार।
देती प्राचीरें जालौर की, अलाउद्दीन को रणहुँकार।।

86

समर आमंत्रण पाकर के, प्रस्फुटित हुई हिलोर।
शेखा बाजि पर सवार हो, चले घाटवा की ओर।
घायलों से पटी धरा, चला विभीषक रण घनघोर।
यशोगाथा साँझ में छुपकर, सो गया पराक्रम का दौर।।

नारी मर्यादा के रक्षक से, हुआ मरुधरा का उद्धार।
पुरुषार्थ बल की पराकाष्ठा तोड़कर, देते शेखाजी रणहुँकार

87

हारित के शिष्य थे बलिष्ठ, समदर्शी तेज उत्ताल।
अरबों के विरुद्ध ताने, कलभोज भृकुटि भाल।
काटकर रिपुओं को जलाया, वीर शक्ति का ज्वाल।
नष्ट किया सूक्ष्मकीटों को, कर बप्पा ने तोय उबाल।।

नागदा के खुमाण का, था शौर्य जोरदार।
भूताला की गाथा कहती, रावल जैत्रसिंह की रणहुँकार।।

88

मेवाड़ का शक्तिशाली राणा, था कुम्भा रणशूर।
मालवे से हुआ कुम्भा का, युद्ध सारंगपुर।
एकलिंग की पवित्र असियों से, कटे लुटेरे क्रूर।
बत्तीस दुर्गों को बनाकर फैलाया, अपना राज्य–सुदूर।।

गुजरात मालवा के सुल्तान, थे हारे–लाचार।
आतताइयों को देता अकेला, राणा कुंभा अपनी रणहुँकार।।

89

दिए ख़िलजी–अकबर को, सतियों के महाश्राप सुनो।
अकबर के क्रूर संहार से, चित्तौड़ में जरा विलाप सुनो।
दौड़ते सरपट हिनहिनाते, चेतक की टाप सुनो।
वीर राणा प्रताप की, अरावली में पदचाप सुनो।।

लेकर जिसने कष्ट, दासों के, तोड़े थे अंहकार।
डराती मात्र मान सिंह को, चेतक की रणहुँकार।।

90

वीरता–उदार के होते यहाँ, संयोग के दर्शन।
सांगा के जूझने का, जाना मुग़लों ने घर्षण।
करते आश्चर्य सबको, अस्सी घावों का प्रदर्शन।
देख रणविजय खिंचा आया, मेवाड़ी वीरता का आकर्षण।

घायल का बहता शोणित ही, वीरता का श्रृंगार।
खानवे के मोर्चे पर गूँजे, सांगा की रणहुँकार।।

91

सांगा ने हिन्दू एकता का, युद्धशंख दिया बजवा।
पदाक्रांत किया सांगा ने, गुजरात से लेकर मालवा।
तोपों घुड़सवारों से जगा, ऐतिहासिक युद्ध खानवा।
किन्तु राजपूत बिखरे जब, आयी मुग़लों की अंधड़ हवा।।

पदाक्रांत लोदी को कर, किया संग्राम ने राज्य–विस्तार।
कर रिपुओं को पदचूर, देते सांगा रणहुँकार।।

93

कभी बंधे थे घावों से, आज खुल चुके धागे।
राणा के तापमान से, अरियों का भय जागे।
खानवे के मोर्चे पर, राणा सांगा सबसे आगे।
एक हिन्दू संघ से, मुग़ल युद्ध से भागे।।

मेवाड़ी तलवार धार से होता, दैत्यों का संहार।
अस्सी घावों के दर्द देते, अरियों को रणहुँकार।।

94

अशुद्धि चढ़े मेवाड़ को, करने जीर्ण–शीर्ण।
पस्त प्याले ढुले मदिरा के, थी विचारधारा संकीर्ण।
सांगा के हिन्दूपत का, था मार्ग कंटकाकीर्ण।
खानवा युद्धगाथा को, अतीत ने दिया उत्कीर्ण।

मुग़ल जमे तोपों से, तैयार सजे घुड़सवार।
खानवा में गूँजती एक, हिंदुओं की रणहुँकार।।

95

कट्टर जिहाद के उद्घोष से, भड़क उठा मर्दाना।
खदेड़ने जब बाबर को, सांगा वीर ने ठाना।
पाती परवन से जगे, राजपूतों का केसरिया बाना।
जमे शत शासकों से, कहलाया हिन्दूपति महाराणा।।

मेवाड़ी खड्ग के प्रकोप से, मुग़ल कटे हजार।
बयाना विजय में गूंजी थी, संग्राम सिंह की रणहुँकार।।

96

एक हिन्दू क्षत्रिय डटे, बही उमंग धारा।

बजे डंका सांगा का, बजता था नगारा।

जय एकलिंग से गूंज पड़ा, विजय जयकारा।

बाबर को खानवा में, हिन्दू–वीरों ने ललकारा।।

रण आह्वान से निकल पड़ी, म्यानों से तलवार।

गूँजती हैं धरा में, गौरव–नायकों की रणहुँकार

97

विक्रम विरुद से अलंकृत, दिल्ली का प्रवर।

अंतिम हिन्दू सम्राट था, हेमचन्द्र वीरवर।

पानीपत के प्रांगण में, खड़े योद्धा तत्पर।

अद्वितीय कौशल से उठे, जयमन्त्रों के स्वर।।

पलटे भाग्य से फैला, मुग़लों का अंधकार।

मध्ययुग में देता हेमू, बैरम खां को रणहुँकार।।

98

गुजरात से बचाई कर्णावती ने, चित्तौड़ निज धरोहर।
हुमायूँ धिक्कारी से किया, रानी ने अग्नि जौहर।
था धधकता रहता चित्तौड़, ललनाएँ सुंदर–मनोहर।
सतियों के उत्सर्ग–भुजों से, दीवारों पर चिन्हित मोहर।।

रणथंभौर–सिवाणा–जालौर–जैसाणा, धधकाते पावक ज्वार।
मुस्लिम सतियाँ भी देती थी, मंगोलों को रणहुँकार।।

99

वनवासियों के मध्य जिनका, बीता था बचपन।
राजकुँवर और जनता में, बना अविस्मरणीय बन्धन।
आज भी घुमन्तु हैं वे, क्या था वो अनूठा अपनापन।
इन्हीं के सहयोग से, हुआ मुग़लिया भूकंपन।।

महलों से दूर अरण्यों में, करते वनवासी कीका पुकार।
तीर वर्षा से गूँजती थी, वीर भीलों की रणहुँकार।।

100

सोलहवीं सदी में जब, चलता था मुग़ल एकछत्र।
तब ठुकरा दासता को जिसने, फाड़े संधिपत्र।
मात्र प्रताप के मस्तिष्क में, था मेवाड़ी आन का मंत्र।
ऐसे स्वाधीनता सेनानी, नहीं मिलते इतिहास में अन्यत्र।।

अकबर को युद्ध आमंत्रण देती, मेवाड़ी राणा का इंकार।
स्वतंत्रवेदी में प्राणाहूत कर, देते मतवाले रणहुँकार।।

101

सुनो सुखदास के दूतों, राणा का समर्पण असंभव।
आ जाना रणक्षेत्र में, असियों से करेंगे महातांडव।
राजमहल सुखों को छोड़, सुनेगा राणा वनों का कलरव।
मुग़ल छापामार से हारेगा, काँपेगा तुर्क महानुभव।।

हल्दीघाटी मात्र ज्वाला थी, अभी शेष हैं धधकना अंगार।
दिवेर में अमर का भाला देता, सुल्तान खां को रणहुँकार।।

102

छोड़ी स्वाभिमानी प्रताप ने, शाही दाग की लंबी कतार।
होगी तृण साज सैय्या और, आपगा बनेगी स्नानागार।
त्याग राजसी सुखों को किया, काननों का दुःख अंगीकार।
राणा तेरे त्याग से, प्रकट करते कृतार्थ आभार।।

थे महाराणा प्रताप, स्वातन्त्र्य समर के स्तम्भ आधार।
घास की रोटी खाने वाले, गुंजाये युगकारी रणहुँकार।।

103

सुख–वैभव को त्यागकर जिसने, भोगा था संताप।
वन–घुमन्तु के थे कष्ट, अगणनीय परिमाप।
अशुद्धि के मंत्र नहीं वे, करते एकलिंग का जाप।
स्वर्णाक्षर में अंकित वीर, शिरोमणि महाराणा प्रताप।।

हल्दीघाटी तीर्थ में गूँजती, करवालों की खनकार।
प्रताप गर्जना की पर्याय थी, प्रताप की रणहुँकार।।

104

खमनौर घिरा गिरि से, था मार्ग लघु कंटीला।
घाटी–नालों से निकले दल, था रणपथ मुड़ाव सर्पिला।
पीत मृदा से सदृश्य होता, दिनकर हल्दीघाटी रेतीला।
सम्मुख रिपुओं से गरजते, हरेक राजपूत हठीला।

स्वाधीन विलोचन से बरसे, तपित रोष की भभकार।
उद्‌घोष जय एकलिंग से गूँजे, द्रुतवती रणहुँकार॥

105

ज्येष्ठ माह में रणक्षेत्र त्रस्त, तेज मार्तण्ड ताप।
गूँजती तीर्थ हल्दीघाटी में, एकलिंग के जाप।
मेवाड़ी राणा के शौर्य ने, दिखाया अपना प्रताप।
तुर्कों के संहार से हरा, मातृभूमि का संताप।।

हल्दीघाटी युद्धमंच में थी, महावीरों की भरमार।
अरावली में गूँजती थी, राणा प्रताप की रणहुँकार।।

106

भक्ति नहीं यहाँ भक्त, वीरगान भजे।
महायुद्ध को तैयार योद्धा, केशरिया बान धजे।
अफ़ग़ानों के सिर पर, अनूठे शिरस्त्राण सजे।
हरावल में ताल ठोकता, हाकिम खां पठान बजे।।

भीषण प्रहारों से, मचे अरिदल में हाहाकार।
हल्दीघाटी रण में गूँजे, अफ़ग़ानों की रणहुँकार।।

107

मेवाड़ सदा भीरुता छोड़, आया करता रण संवाद।
उद्धत सिसोदिया राणा, मेवाड़ी गर्व को कर में साध।
हरावल से चन्दावल ने, गूँजाया हल्दीघाटी में समरनाद।
युद्धरत नारकीय वसुधा पर, बिखरे नरों के हस्त–पाद।।

खमनोर का मतवाला वो, मेवाड़ी राणा खुद्दार।
पलायन करते मुग़लों को, देते मेवाड़ी रणहुँकार।।

108

प्रताप के रौद्रावतार से, भस्म हुए अरि निर्बल।
रिपुदल ठिठककर ठहर गया, देख मेवाड़ का तपोबल।
राणा ने काट मुग़लों को, किया हल्दीघाटी को समतल।
उफनते मेवाड़ी शौर्य से, कंपित हुआ शक्तिवान अचल।।

मेवाड़ी राणा ने बहायी, यहाँ देशप्रेम की रसधार।
प्रताप–प्रेरणा से गूँजायी, सेनानियों ने रणहुँकार।।

109

मेवाड़ी खड्ग धार से बहलोल, कटा बाजि समेत।
चढ़ा चेतक गजमस्तक पर, हुए मानसिंह अचेत।
किन्तु राणा पर प्रहारों से, मिला पलायन का संकेत।
पहन राज–किरीट बीदा, लड़कर हो गए रणखेत।।

पलायन करते राणा के, पीछे पड़े दो सवार।
उन्हें मारकर शक्तिसिंह, देता भातृप्रेम की रणहुँकार।।

110

मान सिंह को देखकर, भड़क उठी दृग–ज्वाला।
मात देने बढ़ा उसे, उद्धत हुआ रणवाला।
बढ़ा निरन्तर आगे, आज़ादी का मतवाला।
चढ़ा गज पर चेतक को, दिया चला भाला।।

चिंघाड़ कर गिर पड़ा था, मर्दाना खूंखार।
गजमस्तक पर टापे गुँजाये, चेतक की रणहुँकार।।

111

राज्य को बचाने अमर हुई, बलिदानी धाय पन्ना।
हरावल में पहले मरने की, चूड़ावतों की अंतिम तमन्ना।
जगे लुहारों का त्याग और, भील कमान प्रत्यंचा कसना।
कह पुकार मैं प्रताप, जगे उत्सर्गी झाला मन्ना।

ले पृथ्वीराज कर तीव्र हमले, फिर उठे उड़णा कुमार।
खपी पीढ़ियों से उठे, वीर तोमरों की रणहुँकार।।

112

बने भीष्म पितामह, चूण्डा त्यागी वीर।
मेवाड़ की ढाल बने, चूंडावत महा–रणधीर।
हरावल में बहाया उन्होंने, अपना शोणित–नीर।
ऋण चुकाया उन्होंने, देकर अपना सिर।

चुण्डावतों की पीढ़ियों ने, बचाया मेवाड़ द्वार।
हाड़ी का मस्तक लेकर, गुँजाये चूंडावत रणहुँकार।।

113

खानवा में झाला अज्जा ने, किया अर्पित निज प्राण।
बलिदान हुए चित्तौड़ में, झाला आसा, वीर सुरताण।
हल्दीघाटी के बीदा तुम, झाला वंश के कुलाभिमान।
नहीं सानी कोई झालाओं का, होता उनका सर्वत्र बखान।।

अज्जा–देदा–बीदा ने, चुकाया धरा का उपकार।
मेवाड़ किरीट को पहनकर झाला, देते मुग़लों को रणहुँकार।।

114

साथ लाया आसफ वाहिनी, जैसे होती प्रलय की वृष्टि।
भारी सैन्यदलों के कदमों से, कंपित हुई गोंड सृष्टि।
वीरांगना दुर्गावती की असि से, अंधी हुई कुदृष्टि।
निरन्तर बढ़ते मुग़लों से, खपी गोंडवाना समष्टि।।

अबला रानी बनी भवानी, करती रण में वार–प्रहार।
चूड़ियाँ नहीं खनकती तलवारें देती, अकबर को रणहुँकार।

115

मेड़तिया जयमल से जग में, नहीं था वीर कोई दूजा।
चित्तौड़ी वक्ष से टकराकर गिरा, आक्रांता अकबर धूजा।
विस्फोट सुरंग से उड़ी बुर्जे, धमाका चित्तौड़ गूँजा।
अंस पर बैठे जयमल गूँजाये, कल्ला जय चारभुजा।।

जयमल फत्ता होली की, उड़ाये रक्तिम गुबार।
आगरे किले में सजी मूर्तियाँ, गूँजाती रणहुँकार।।

116

निशानी दो प्रियतमा, नहीं जाऊंगा रण में खाली।
बलिदान उठा हाड़ी का, इतिहास बनाने वाली।
काटकर अपने शीश से, सजा दी उसने थाली।
पहनकर उसकी मुण्डमाला, टूटा वीर बलशाली।।

लड़े सलूम्बर चूण्डा वीर, थे युद्धों में शुमार।
निज मस्तक काटकर देती, क्षत्राणियां अपनी रणहुँकार।।

117

ऐश्वर्य वैभव के दरबारों में, हुआ स्वाभिमान का ह्रास
गाया चारणों ने काव्य रचकर, वीरत्व का अरदास।
जगाई बूंदी कवि ने, सोई स्वाधीनता की आस।
गोरों के दासों पर गरजे, महाकवि बांकीदास।।

आत्मभिमानी चरित्र लिखकर, किया केसरी ने नमस्कार।
मुग़ल दरबारों में दोहे गुंजाये, दुरसा आढ़ा की रणहुँकार।।

118

अमर स्वाभिमान के प्रतीक थे, अमरसिंह राठौड़।
लगाया मतीरे की राड़ में, राठौड़ ने दमखम जोर।
भरे दरबार में अपमान से, जगा सिंह नागौर।
काटकर सलावत को बनाया, वीर ने काल का कौर।।

अमरसिंह के रौद्ररूप से, काँपता मुग़ल दरबार।
बुर्ज से कुदाकर बाजी से, देते अमरसिंह रणहुँकार।।

119

मालदेव के जैता–कूंपा, थे अद्वितीय सेनानायक।
गिरी सुमेल युद्धमंच में बने, वो वीरता के गायक।
शेरशाह से भिड़कर वे, बने मातृभूमि के त्रायक।
स्वयं कटकर बन गये वो, मारवाड़ के फलदायक।।

सुमेल–गिरी देती है, कपटी सूरी को दुत्कार।
मुट्ठी भर बाजरे देते, शेरशाह को रणहुँकार।।

120

गोगा–मेहा–हडबू–पाबू, थे रामदेव पंचपीर।
शीश काटकर ऋण चुकाया, जननी गाय का क्षीर।
बोला बरबस ग़ज़नवी देखकर, गोगा को जाहरपीर।
गठजोड़ों को काटकर लड़ा, पाबू राठौड़ वीर।।

राह दिखाकर समाज को, लोकदेवता बने भरतार।
रुणेचा की चिर–समाधि से गूँजे, रामदेव की रणहुँकार।।

121

कछवाहा महाशक्ति से, अफ़ग़ान थे अनजान।
काबुल में तब करा, राजा मानसिंह ने रक्तपान।
फहरते राजध्वज पचरंगे से, रखता जयगढ़ अभिमान।
भूली शौर्यगाथा से कब, इतिहास करेगा अमियपान।।

कछवाहा शक्ति से काबुल में, मचता हाहाकार।
अफ़ग़ान दलन से गूँजती, राजा मानसिंह की रणहुँकार।।

122

जमवाय कृपा से राजा मानसिंह, महायोद्धा था उत्कट।
खप गया वो शूर जिसने, जीता अटक से कटक।
पुत्र वियोग में न टूटा, समय था बड़ा विकट।
देती उत्तर जीवटता भीषण, सम्मुख मृत्यु निकट।।

बिना आमेर पराक्रम से, मुग़ल दिल्ली थे लाचार।
मुग़ल अभियानों में गूँजे, कछवाहों की रणहुँकार।।

123

स्तम्भों का विजयभिमानी, गर्वीला गढ़ चित्तौड़ खड़ा।
भूस्थली पर फैला बीकाण, जूनागढ़ हैं विशाल बड़ा।
अरण्य दुर्ग श्रेणी सिरमौर, रणथंभौर था भयंकर लड़ा।
सूरजमल की वीर ज्वाल से, जाटों का लोहागढ़ अड़ा।।

खींचियों का शेरदिल गागरौन हैं खड़ा पर्वतकार।
भटनेर की प्राचीरें देती, तैमूर लंग को रणहुँकार।।

124

बख्तरबंद हैं रणथंभौर, अजय गढ़ बिठली तारागढ़।
वैभव बरसाता आमेर, तो बड़ा गर्वीला चित्तौड़गढ़।
सिरताज किला स्वर्णगिरि और, भास्कर से चमकता सोनारगढ़।
देख दुर्ग को गिरती पगड़ी, वो बसा गगन पर कुंभलगढ़।।

देख मेहरानगढ़ को होते विस्मित, अभेद्य पर्वत देते ललकार।
सुनो दुर्ग में शोर जहाँ, गूँजती शाकों की रणहुँकार।।

125

भेदने किले को अरियों की, न चल सकी चालें।
कुतुबुद्दीन न तोड़ सका, गढ़ ग्वालियर के ताले।
रणथम्भौर में शोणित के, फूट पड़े थे नाले।
मराठे राजा मचले थे, सिंहगढ़ के मतवाले।।

चित्तौड़ दुर्ग के बिना थी, विजय निःसार।
कालिंजर देता शेरशाह को, तीव्र रणहुँकार।।

126

वीर प्रसूता धरती हैं, रेतीली राजस्थान।
इस माटी में बड़े हुए, वीर दुर्गादास महान।
हुआ महाकाव्यों में, इस धरा का गुणगान।
उन्नत भाल पर हुआ लिखा, अमिट स्वाभिमान।।

यहाँ की हुँके मिटाती हैं, कायरता का विकार।
यहाँ उठती धोरों से, गगनभेदी रणहुँकार।।

127

जैसाण था प्राचीन में, वीरता की पाठशाला।
भटनेर था भारत का, उत्तर का रखवाला।
कभी दुर्ग–प्रांगण में, फूटा था रक्त नाला।
कभी जली थी यहाँ, क्षत्राणियों की जौहर ज्वाला।।

भाटियों की असियों से, यहाँ कटे थे आंतक खूंखार।
सूर्यपुंज से चमककर देता, सोनार अपनी रणहुँकार।।

128

कुरुक्षेत्र में धूम मचाये, महाभारत के पाण्डव।
किया था सुमेल में, जैता कुम्पा ने तांडव।
मचला था तराईन में, अजेयमेरु का गौरव।
खूब लड़ा था राणा, हल्दीघाटी का भैरव।।

पानीपत की लड़ाईयां, बदलती थी युग–धार।
रण–देवों के भीषण रण से, उठती रणहुँकार।।

129

राइका उद्दंडी को काट डाला, दुर्गा ने होकर अधीर।
तब गुणग्राही जसवंत ने कहा, शाबाश करणोत वीर।
अजित शिशु की रक्षा हेतु, दुर्गा ने बहाया रुधिर।
मारवाड़ विद्रोह अनल से, भय खाता आलमगीर।।

आजीवन संघर्ष से चलता, एक जाता घुड़सवार।
कुरान पढ़ाकर देते दुर्गा, कट्टरता को रणहुँकार।।

130

सन उन्नासी में घटी, दिल्ली की दास्तान।
न्याय लड़ा रौद्र बनकर, मुग़ल बने हैवान।
असंख्यों से भिड़े, जोधाणे के राठौड़ महान।
राठौड़ रानियों ने किया, असि से धारा–स्नान।।

मारवाड़ रेतीला का हैं, इतिहास चमकदार।
औरंगजेब से भिड़कर गूँजती, राठौड़ी रणहुँकार।।

131

जोधाणे को उजाड़ने की, हुई जब आशंका।
तब असि उठाकर चमके, वीर दुर्गादास बंका।
उन्होंने मिलाकर अकबर को, बजाया नीति का डंका।
एक आम राजपूत के संघर्ष ने, धुजाई मुग़लों की लंका।।

धरमत के रण से निकला, दुर्गादास अवतार।
मुग़लों को हराकर गूँजती, दुर्गा वीर की रणहुँकार।।

132

दुर्गादास सेंकने रोटी को, धधकी श्मशान की आग।
खाना घोड़े की पीठ पर, अमर तेरा त्याग।
राज्यहीन मंजूर राजनिर्माता, अद्‌भुत तेरा विराग।
रोंगटे खड़े करने वाली गाथा से, जाग मनुज जाग।।

कर गये क्षिप्रा में विलीन होकर, स्वामिभक्ति का संचार।
पुण्यधरा पर गूँजती हैं, दुर्गादास की रणहुँकार।।

133

हुआ मावल का जागरण, बड़ा शिवाजी का सम्मान।
हुआ जावली विजय से, वीर शिवाजी का उत्थान।
संहार दैत्य अफ़ज़ल से, टूटा आदिलशाही का अभिमान।
स्वराज जयपथ से हुआ, महाशत्रु कम्पायमान।।

उदित हुआ तेजस्वी, जब घना घोर था अंधकार।
जय भवानी नारों से गूँजे, वीर शिवा की रणहुँकार।।

134

ले भवानी असि से, जिसने पाला स्वप्न स्वराज।
अनेकों दुर्ग विजयों से, बने शिवाजी मराठे सिरताज।
तमतमाकर बीजापुर चढ़ा लाया, अफ़ज़ल जैसे खूंखार बाज।
शिवाजी ने दबायी चपलता से, अतिबल की दम आवाज़।।

अफ़ज़ल वध से मराठे मचाते, आदिलशाही में हाहाकार।
बघनखा से निकली अंतड़ियां, देती अरियों को रणहुँकार।।

135

शिवा कीर्ति जब पहुँची दिल्ली, दिखा सल्तनती मुखमण्डल लाल।
तब शाइस्ता ठोकता आया, मिथ्या डंकों की ताल।
भगा शाइस्ता भयभीत देख, धरा शिवाजी ने अरि कपाल।
स्वराज बने कुबेर शक्ति तो, लूटा सूरत का वैभव माल।।

घेर आये मिर्जे राजा तो, थमा शिवाजी का विस्तार।
बंद आगरे में दहाड़कर सिंह, देता औरंगजेब को रणहुँकार।।

136

हुई क्रोधानल से, सल्तनत की दुर्गति।
कोंडाणा में गूँजे चहुँ, तानाजी की वीरगति।
राजसिंहासन पर जमे, रायगढ़ के छत्रपति।
मराठों के घावों से, मुग़लों की लूटी संपत्ति।।

हिन्दू–रक्षक के संघर्ष से, हतप्रभ जन–संसार।
मराठा संग्राम में गूँजे, ताराबाई की रणहुँकार।।

137

उठा पंजाब सुदूर, जब आये थे गुरु नानक।
बदला गुरु गोविंद ने, सिखों के मानदंड मानक।
मुग़लों पर टूट पड़े थे, सिख सूरमा नायक।
देखा था अधर्मियों ने, रूप बंदा का भयानक।।

सिखों की कृपाण तेज थी, तेज थी धार।
धर्म अडिगता के गुरु तेग से, गूँजे रणहुँकार।।

138

गोकुल–चूड़ामन वीर का, वो कुल सुजान।
गाता ब्रजभूमि का चप्पा–चप्पा, उसके शौर्यगान।
जिसके पराक्रम से निस्तेज हुआ, मुग़लिया सुल्तान।
लड़कर गये भयानक युद्ध में, शाहदरा में प्राण।।

भरतपुर बना शक्ति–केंद्र, था उनके पास बल अपार।
मुग़ल–मराठों को देता था, सूरजमल अपनी रणहुँकार।।

139

थे जवाहर–डूँगजी, ठिकानेदार बठोठ पाटोदा।
शेखावाटी में महाक्रांति का, तैयार हुआ मसौदा।
आगरा में क्रान्तिपुत्रों ने, गोरों को कदमों तले रौंदा।
लूटकर नसीराबाद को उन्होंने, ब्रितानियों का गर्त खोदा।

धन बाँटकर गरीबों को, वे पाते थे दुआएँ अपार।
रॉबिनहुड बनकर वे गोरों को, देते थे रणहुँकार।।

140

जब जंजीरों से थी, माँ भारती कैद।
तब कुशाल ने मैसन का, दिया लटका शिरोच्छेद।
वीरों ने ब्रितानी नाम को, दिया शीघ्र कुरेद।
क्रान्तिपुत्रों की अराजकता से, आया गोरों को स्वेद।।

विद्रोहियों ने किया नष्ट–भ्रष्ट, लूटे कोषागार।
आसोप–आऊवा से उठे, सन सत्तावन की रणहुँकार।।

141

जिसके प्रेरक थे शिवाजी, और माँ भवानी।
जिसकी युद्धक्षेत्र में, डोली थी जवानी।
जिसने गोरों से भिड़, दी थी कुर्बानी।
इतिहास में कहलायी वो, झाँसी वाली रानी।।

बलिदानी रानी के आदर्श, जाएंगे पूजे बारम्बार।
प्राणित करेगी नारी शक्ति को, लक्ष्मीबाई की रणहुँकार।।

142

ब्रितानी राज को उखाड़ने की, जिसने थी ठानी।
जिसने की हरेक रण में, गोरों की रवानी।
उस बूढ़े कुँवर की दिखी, क्रांति में जवानी।
उनकी युगों तक गूँजेगी, गाथा अमर बलिदानी।।

स्वाधीनता पाने सदैव चलेगी, बिहारी सिंह की तलवार।
प्राण फूँकेगी वृद्धों में भी, कुँवर सिंह की रणहुँकार।।

143

गोरें कोनों–कोनों में, फैल रहे थे पिशाच।
तब उभरा सनातन हमारा, धर्म आर्य–समाज।
दयानन्द ने सुलझाये अनेकों, हिन्दू वेदों के राज।
रामकृष्ण ने सुधार का, किया दुष्कर काज।।

युवा की धर्म–व्याख्या से, फैला वेदांत–विचार।
शिकागों में गूँजे युवा, विवेकानंद की रणहुँकार।।

144

खुदीराम जैसे युवा थे, देश के बलधारी।
विप्लव–वीरों की हुँकों से, फूट पड़ी चिंगारी।
कर रहे थे क्रांतिवीर, भावी युद्ध की तैयारी।
भूकम्पों से हिल उठी, समूची सत्ता सारी।।

भरा था सपूतों में, अदम्य वीरता का भण्डार।
बम विस्फोट कर गूँजती, सेनानियों की रणहुँकार।।

145

ठानकर आज़ादी वाला, वो मतवाला था आजाद।
बिगुल बजाकर चन्द्रशेखर ने, किया विद्रोह का ईज़ाद।
एक को मारने के लिए, आई नपुंसक की तादाद।
शेष बची गोली से, कर गया वीर स्वतंत्र आह्लाद।।

खुद को मारकर गोली से, किया कायरता का तिरस्कार।
मिथ्या अहिंसा में छिपे को, देते चन्द्रशेखर रणहुँकार।।

146

लिखी उन्होंने प्रथम, स्वाधीनता समर की कहानी।
क्रांति दमन कुचक्र में, मिला कठोर कालापानी।
अपने तेज से रोकी जिसने, इस्लाम की मनमानी।
हिन्दूनायक की गाथा कैसे, हो रही अनजानी।।

दी सरकार ने सावरकर को, सजा आजीवन दो बार।
उकेरकर दीवारों पर विप्लवकाव्य, देते स्वातन्त्र्यवीर रणहुँकार।।

147

शहीद भगत सिंह हैं, भारत के दीप्त सितारे।
बन्दूकों की गोलियों से, मरे गोरे बेचारे।
फाँसी के फंदों से कभी, भगत सिंह न हारे।
बम विस्फोट से गूँजे, इंकलाब के नारे।

व्यक्त करते राष्ट्रवासी, क्रान्तिपुत्र का आभार।
फाँसी के फंदों से उठती, भगतसिंह की रणहुँकार।।

148

भारत को लूटकर गोरें, कर रहे थे मौज।
उस समय नेताजी निकले, मित्रों के लिए खोज।
जापान–सिंगापुर में लड़ी, आज़ाद हिंद फ़ौज।
बर्मा तक आ पहुँचकर, किया गोरों को जमींदोज।।

नेताजी के प्रहारों से, टूटी गुलामी की दीवार।
स्वतंत्रता के उद्घोष से, गूँजती बोस की रणहुँकार।।

149

सन सत्तावन से सैंतालीस तक, भड़की महाचिंगारी।
स्वतंत्रता की बलिवेदी में, कूद पड़े नर–नारी।
यहाँ बिस्मिल–तिलक की, चली तलवार दुधारी।
अहिंसक गाँधी के सत्याग्रह से, धूजै सत्ताधारी।।

राम से गाँधी तक हुए, भारत के शिल्पकार।
लोकतंत्र के शासन में, देती जनता रणहुँकार।।

150

टीथवाल में हुआ आंतक से, आरम्भ युद्ध विध्वंस।
तब पीरु सिंह ने प्राणों का, किया अर्पित अंश।
व्याल चीन ने जब ड़सा, भारत पर गरल दंश।
तब दमका शैतान सिंह, चमका चन्द्र वँश।।

जदुनाथ के बलिदान से, बहती देशभक्ति की रसधार।
गूँजे शहीदों के बलिदान से, परमवीरों के रणहुँकार।।